International Journal of Advanced Research in Education and TechnologY(IJARETY)

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 9, Issue 4, July-August 2022 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2022.0904016

भारत में मानवाधिकार आन्दोलन: विकास एवं स्वरूप

Anil Kumar Yadav

Assistant Professor in Political Science, Babu Shobha Ram Govt. Arts College, Alwar (Rajasthan), India

प्रकृति में सभी जीव एक दूसरे पर निर्भर हैं। एक-दूसरे पर निर्भर होते हुए भी सभी अपने-अपने में पूर्ण रूप से स्वतंत्र हैं। स्वतंत्रता सभी का मूलभूत अधिकार है। मनुष्य भी अपने अस्तित्व को स्वतंत्र रखने के साथ ही साथ अपने व्यक्तित्व का पूर्ण रूप से विकास भी चाहता है। इसके लिये मनुष्य को कुछ ऐसी परिस्थितियों की आवश्यकता थी जिनके बिना ना तो उसका स्वतंत्र अस्तित्व रह सकता था और न ही वह पूर्ण विकास कर सकता था। जब तक मनुष्य अपने को प्रकृति का एक अंग समझता रहा, पृथ्वी पर संतुलन बना रहा, लेकिन कलांतर मे मनुष्य अपनी बुद्धि के बल पर स्वयं को प्रकृति का स्वामी समझने लगा।

इसी ने राजाओं में अपने राज्यों के विस्तार की अभिलाषा को जन्म दिया और इसी के साथ युद्ध की विभीषिका की शुरुआत हुई। मनुष्य जानवर से भी अधिक हिंसक प्रवृत्ति का हो गया। अपने अहम की रक्षा के नाम पर विस्तारवादी नीति को आधार बनाकर ही विश्व के अधिकांश युद्ध हुए। जब कुछ शक्तिशाली मानवों के द्वारा अन्य असहाय मनुष्यों के ऊपर अत्यधिक अत्याचार किए जाने लगे तो सभ्य समाज के मापदंड के अनुरूप सभी मनुष्यों को स्वतंत्र एवं समान मानते हुए उन्हें समुचित अधिकार प्रदान किए जाने व इस हेतु आवश्यक परिस्थितियां और सुविधाएं प्रदान करने और उन अधिकारों के संरक्षण की मांग की जाने लगी और जिसके फलस्वरूप मानवाधिकार की अवधारणा का जन्म हुआ।

व्यक्ति के व्यक्तित्व का चहुंमुखी विकास तभी सम्भव है जब व्यक्ति को अपनी अन्तर्निहित शक्तियों के प्रस्फुटन का समुचित अवसर प्राप्त हो। इसके अभाव में उसका व्यक्तित्व कुण्ठाग्रस्त हो जाता है और उसकी प्राकृतिक क्षमताएँ अविकसित रह जाती है। इन शक्तियों के विकास हेतु वह समाज के सामने कुछ मांगे रखता है। इस वातावरण को उत्पन्न करना एवं बनाये रखना, राज्य और समाज का कर्तव्य है। समाज नैतिक एवं सार्वजनिक कल्याण के हित में होने वाली उचित मांगों को स्वीकार कर लेता है, लेकिन इन उचित मांगों को कानूनी स्वरूप प्रदान करना राज्य के क्षेत्राधिकार में है।

इस प्रकार जब राज्य के द्वारा सामाजिक रुप से नैतिक, कल्याणकारी एवं उचित मांगों को जब कानून का स्वरूप प्रदान कर दिया जाता है और इस हेतु राज्य के द्वारा व्यक्ति को प्रदान की जाने वाली आवश्यक परिस्थितियां एवं सुविधाओं का नाम ही अधिकार है। इस कारण वर्तमान में प्रत्येक राज्य के द्वारा अधिकाधिक विस्तृत अधिकार प्रदान किए जाते हैं।

इस प्रकार मानवाधिकार का अर्थ है - संपूर्ण मानव जाति के अधिकार जिसमें उनकी मान-मर्यादा जन्म से समान होती है। यह मान-मर्यादा ऐसे मूलभूत नैतिक मूल्य हैं जो जन्म से ही मानव होने के कारण प्राप्त होते हैं।4 यही आवश्यक मानवीय गुण व्यवस्थित रूप से मानवाधिकार कहलाते हैं। मानवाधिकार जीवन की वह व्यवस्था है जिन्हें सामाजिक एवं राजनीतिक मान्यता मिली होती है और जिनका प्रयोग करके व्यक्ति अपने जीवन में श्रेष्ठता को प्राप्त करता है।

मानवाधिकारों की प्राप्ति के लिए संघर्ष का इतिहास भी उतना ही पुराना है जितना मानव सभ्यता का इतिहास। मानवाधिकार आन्दोलन अपने सीमित साधनों के साथ अपनी शैशव अवस्था में ही था तथा एक विशिष्ट समुदाय से ही संबंधित था। मानवाधिकार कार्यकर्ता राजनीतिक और धार्मिक विचारों तथा समूहों से जुड़े हुए थे। इस समय बहुत से मानवाधिकार आन्दोलन तथा विशिष्ट नागरिक अधिकारों ने सामाजिक परिवर्तन को बहुत प्रभावित किया। श्रमिक संगठनों ने श्रमिकों के हितों के लिए आवाज उठाई। श्रमिक संगठनों में हड़ताल के अधिकार का अधिनियम, कार्य की न्यूनतम परिस्थितियों की स्थापना, बालश्रम का निषेध, संयुक्त राज्य अमेरिका तथा बहुत से यूरोपीय देशों में 40 घंटों के सप्ताह जैसे अधिनियम बनवाए। इसी बीच महिला अधिकार आन्दोलनों के निरंतर प्रयासों से महिलाओं को वोट का अधिकार प्राप्त हुआ।

अफ्रीका तथा एशिया के बहुत से देशों ने उपनिवेशी शक्तियों को उखाड़ फेंका तथा सदियों पुराने दमन से मुक्ति पाई। इन स्वतंत्रता संघर्षों में सर्वाधिक प्रसिद्ध आन्दोलन महात्मा गाँधी के नेतृत्व में ब्रिटिश शासन के विरूद्ध चलाया गया आन्दोलन था। 20वीं शताब्दी में मार्टिन लूथर किंग अमेरिका में रंगभेद के विरूद्ध नागरिक अधिकारों के सफल आन्दोलन का नेतृत्व किया।

मध्ययुग में मानवाधिकारों की धारणा को गहरा धक्का लगा। ब्राह्मणवादी व्यवस्था कायम हुई। कमजोर वर्गों के प्रति भेद-भाव बड़ गया। फिर मुसलमानों के आगमन से नए प्रकार की व्यवस्था का प्रादुर्भाव हुआ तथा मुसलमानों तथा गैर मुसलमानों के बीच भेद किया जाने लगा। अकबर जैसे शासकों ने मानवाधिकारों को पुनः जीवित करने के लिए सराहनीय भूमिका का निर्वाह किया। अकबर के समय में आने बाले यात्रियों के वृत्तांतों से उसके कानून और अधिकार के प्रति अनुराग का ज्ञान होता है। अकबर द्वारा चलाई गई

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 9, Issue 4, July-August 2022 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2022.0904016

प्रवृति को औरंगजेब ने भी अपनाया। इसी समय चैतन्य, कबीर, नानक और बहुत से सूफी संतों के भक्ति आन्दोलनों ने धर्म की खोई हुई अवधारणा को पुनर्जीवित करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

एक गणतांत्रिक समाज में खुले व स्वतंत्र मंच की स्थापना के द्वारा सरकार व नागरिकों की प्रभावी व अधिकतम हिस्सेदारी सुनिश्चित होती है। नीति निर्माण और उसके क्रियान्वयन में नागरिकों की रूचि का रहना आवश्यक है इसी के द्वारा शासन प्रक्रियाओं में महत्त्वपूर्ण हिस्सेदार के रूप में लोकतांत्रिक अधिकारों का उपयोग किया जा सकता है। समकालीन नागरिक समूहों द्वारा की जाने वाली सभी प्रकार की पहल के केन्द्र में यह धारणा है कि राष्ट्र के शासन, विकास व प्रगति के लिए अकेले राज्य को ही उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। लोकतांत्रिक व्यवस्था में नागरिकों की व्यापक हिस्सेदारी व योगदान को अधिकारों की जानकारी तथा शिकायतों के निवारण की उचित व्यवस्था के द्वारा ही सुनिश्चित किया जा सकता है।

इस दिशा में संविधान द्वारा प्रदत्त बुनियादी अधिकारों को सुरक्षित करने का पहला चरण एक पारदर्शी राजनीतिक प्रक्रिया व उसके अन्तर्गत कानून बनाना है। विभिन्न नागरिक जन आन्दोलनों ने संविधान प्रदत्त अधिकारों के राज्य या उसके विभिन्न उपकरणों द्वारा अतिक्रमण किए जाने के विरोध में आवाज उठाई व आन्दोलन किए हैं। राज्य के द्वारा मौलिक अधिकारों के अतिक्रमण को रोकने व मानवाधिकारों को वास्तविक रूप में प्राप्त करने के लिए नागरिकों का जागरूक व चौकस रहना आवश्यक है।

संसार के सभी धर्मों, मतों, संप्रदायों में वसुधैव कुटुंबकम् के मानवीय दृष्टिकोण पर बल दिया गया है। साथ ही प्रत्येक व्यक्ति की आत्मा को परमात्मा की संतान माना गया है। भारतीय संस्कृति का आधार सर्वे भवन्तु सुखिनः है। यह सहज भाव भारत के वेद, उपनिषद् या अन्य काव्य-ग्रंथों में भी मिलता है। भारतीय दर्शन के अनुसार व्यक्ति का प्रत्येक अधिकार सामाजिक दायित्वों से जुड़ा है अर्थात् मनुष्य के जीवन का लक्ष्य अधिकतम सुखों की प्राप्ति नहीं, बल्कि सबका अधिकतम हित सुनिश्चित करना है।

मानवाधिकार किसी न किसी रूप में आदिकाल से ही भारतीय संस्कृति एवं मानसिकता का अंग रहे है। भारतीय समाज में मानवाधिकार संबंधी सिद्धांत आदिकाल से ही आत्मसात् कर लिए गए थे जिनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को स्वतंत्रता, उसके जीवन का संरक्षण और अन्य अधिकार मनुष्य होने के नाते ही मिल जाते थे। यहां तक कि युद्ध और महाविनाश के बाद भी बंदी बनाए गए शत्रुसेना के सैनिकों तथा बंदियों का वध तब तक नहीं किया जाता था, जब तक कि उस पर आरोप तय न हो जाएं। वस्तुतः मानवाधिकारों के संरक्षण का मूल भारत के वैदिक काल के धर्म से ही पाया जाता है।

भर्तृहरि, वात्स्यायन, कौटिल्य आदि के ग्रंथों में भी मानवाधिकारों को मनुष्य का स्वाभाविक गुण-धर्म बतलाया गया है। अथर्ववेद में कहा गया है कि, जीवन का जुआ प्रत्येक व्यक्ति के हाथों में समान रूप से दिया गया है। अतः प्रत्येक व्यक्ति अपने अधिकारों की सहायता से अपनी खुशी को पाने का प्रयास कर सकता है। भारत के विभिन्न संतों ने भी मानवाधिकार की रक्षा हेतु प्रयास किए।

बुद्ध, महावीर, कबीर, गुरुनानक आदि के संदेश भी हमें मानवीय मूल्यों और अधिकारों की रक्षा का संदेश देते हैं। अशोक से लेकर अकबर तक अनेक भारतीय सम्राटों ने मानवाधिकारों को पोषित किया। इस प्रकार भारत की विश्व बंधुत्व की भावना पूर्वी सभ्यताओं का प्रेरणा स्रोत रही है। यही नहीं हमारी सभ्यता तथा संस्कृति में तो मानव के अतिरिक्त प्रकृति की समस्त शक्तियों का भी उतना ही सम्मान किया जाता रहा है। भारत जैसे बहुनस्लीय व बहुभाषीय समाज में सामाजिक आन्दोलन की परिभाषा करना सरल नहीं है, किन्तु व्यापक अर्थ में गैर-संस्थागत समूहों द्वारा व्यक्त या अभिव्यक्त ऐसा प्रयास जो स्थापित व्यवस्था में या उसके किसी हिस्से में बदलाव के द्वारा जनहित के उद्देश्य से प्रेरित हो, सामाजिक आन्दोलन कहा जा सकता है।

सामाजिक आन्दोलन संस्थाओं व सामाजिक तौर-तरीकों को बदलने का प्रयास करते हैं। वे सुधार या अग्रगामी परिवर्तनों द्वारा आमतौर पर एक या अधिक समूहों के स्थापित व्यवस्था में हितों के बढ़ाने के उद्देश्य से प्रेरित होते हैं। सामाजिक आन्दोलन, मौजूदा सामाजिक संबंधों व संस्थागत ढाँचों में बुनियादी परिवर्तन करने का प्रयास करते हैं। इस व्यापक परिभाषा के साथ, यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि भारत में प्रजातंत्र व स्वतंत्रता का परस्पर संबंध पश्चिमी उदारवादी प्रजातंत्रीय व्यवस्थाओं से काफी भिन्न है।

भारतीय इतिहास में वर्ष 1800 से कई सामाजिक आन्दोलन नजर आते हैं। सामान्यतः ऐसे संघर्ष तत्कालीन सरकारों के विरोध में संगठित हुए, उसके साथ ही उस समय के प्रशासन ने कुछ सुधार भी किये उदाहरण के लिए व्यक्तिगत सुधार को जैसे राजाराम मोहन राय, ईश्वरचन्द विद्यासागर व दयानन्द सरस्वती द्वारा किए गए प्रयत्नों के प्रभाव स्वरूप अंग्रेजी औपनिवेशिक शासन द्वारा सामाजिक समानता स्थापित करने की दिशा में वैधानिक परिवर्तन किए गए। सामान्यतः इन परिवर्तनों के सकारात्मक प्रभाव भारत के उन समूहों पर पड़े, जो ऐतिहासिक दृष्टि से सामाजिक उपेक्षा के शिकार थे।

उदाहरण के लिए महिलाएँ प्रमुख रूप से उन नए कानून से लाभान्वित हुई, जिनके द्वारा सती प्रथा या विधवा-विवाह प्रतिबंध को समाप्त कर दिया गया। भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस के नेतृत्व में किए गए राष्ट्रीय आन्दोलन ने एक व्यापक लोकतांत्रिक संघर्ष चलाया,

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 9, Issue 4, July-August 2022 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2022.0904016

जिसमें व्यापक मानवाधिकार व नागरिक स्वतंत्रता के मुद्दे शामिल थे। इसी आधार पर भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस ने नागरिक अधिकारों का हनन करने वाले कई दमनकारी कानूनों जैसे 1878 ई. का शस्त्र-कानून प्रेस पर प्रतिबंध व राजद्रोह कानून का विरोध किया। किन्तु इसी काँग्रेस ने, कई दमनकारी कानूनों का समर्थन भी किया और इस प्रकार स्वतंत्रता आन्दोलन में एक स्वस्थ लोकतांत्रिक प्रभाव स्थापित करने में असफल रही।

भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस का प्रमुख लक्ष्य अंग्रेजी शासन से स्वतंत्रता प्राप्त करना था। इस स्वतंत्रता के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उसने सामाजिक स्थायित्व की आवश्यकता और मानवाधिकारों के समर्थन के लक्ष्यों के बीच निरंतर एक संतुलन बनाए रखने का कठिन प्रयास किया। इसी कारण काँग्रेस नागरिक स्वतंत्रता व अधिकारों की समुचित पक्षधर न हो सकी और दूरगामी नागरिक और सामाजिक आन्दोलनों की आवश्यकता और कमी बनी रही।

भारत में एक विशिष्ट नागरिक अधिकार आन्दोलन का आरंभ 1934 में स्थापित इंडियन सिविल लिबर्टीज यूनियन ने किया। इसकी प्रमुख गतिविधियाँ नागरिक अधिकारों के हनन संबंधी जानकारी एकत्रित करना था। विशेष रूप से जेलों में बंद कैदियों व विभिन्न प्रकार की कैद में रखे गये बन्दियों की हालत, पुलिस अत्याचार और साहित्य व प्रेस पर लगे प्रतिबन्ध इत्यादि पर ध्यान देना था।

इसके अतिरिक्त बम्बई सिविल लिबर्टीज यूनियन, मद्रास सिविल लिबर्टीज यूनियन, व पंजाब सिविल लिबर्टीज यूनियन जैसे संगठनों ने भारत में एक जीवन्त सामाजिक आन्दोलन को आरंभ किया। वर्ष 1937 में भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस विभिन्न प्रान्तों में चुनाव जीतकर सत्ता में आई। इन नव निर्वाचित प्रांतीय सरकारों को मानवाधिकारों के हनन का दोषी ठहराया गया। इंडियन सिविल लिबर्टीज यूनियन के द्वारा इन मुद्दों के उठाए जाने से उसके व काँग्रेस के चीच तानव बढ़ा। इसके अतिरिक्त स्वतंत्रता प्राप्त होने पर इंडियन सिविल लिबर्टीज यूनियन के संस्थापकों द्वारा नागरिक अधिकारों के पक्षधर संगठन की आवश्यकता न रहने की घोषणा उसके समाप्त होने का कारण बनी

पंडित जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में काँग्रेस सरकार ने भारतीय संविधान के माध्यम से स्वतंत्र भारत के नागरिकों को अविभाज्य व पूर्ण मौलिक अधिकार प्रदान किए। भारतीय संविधान विश्व का सबसे विस्तृत, प्रगतिशील व अधिकारों पर आधारित संविधान है। यह लगभग उसी समय रचित मानवाधिकारों के सार्वभौमिक घोषणा पत्र से प्रभावित था। मौजूदा अधिकारों पर आधारित अनेक सविधानों से भी कई विशेषताएँ इसमें अपनाई गई।" यही कारण है कि इसमें मानवाधिकारों के आधारभूत सिद्धान्त निहित हैं, व सविधान उनकी सुरक्षा का भी आश्वासन देता है।

भारतीय संविधान के दस्तावेज में भारतीय जनता के अधिकारों के अंग्रेजी औपनिवेशिक सत्ता के द्वारा हनन के विरूद्ध किए गये ऐतिहासिक संघर्ष के प्रमाण मिलते हैं। संविधान नागरिक अधिकारों के अतिक्रमण के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करता हैं. इसके अतिरिक्त, स्वतंत्रता के लिए संघर्ष में निहित अन्य आदशों, विशेष रूप से सामाजिक सुधार के संकल्प व उसके सती प्रथा, बाल-विवाह व छुआछूत जैसी प्रथाओं के विरूद्ध सक्रिय प्रयास भी इनमें शामिल है। संविधान राज्य के लोगों के कल्याण व राहत पहुँचाने के लिए उचित नीतियाँ बनाने व लागू करने का आदेश देते हुए नागरिक अधिकारों के अतिरिक्त आर्थिक व सामाजिक अधिकार के महात्मा गाँधी के नेतृत्व ने भारतीय समाज में रचनात्मक ऊर्जा को जाग्रत किया।

इसी ऊर्जा में भारतीय समाज में गाँधीवादी आन्दोलन के अन्तर्गत भौतिक व आध्यात्मिक कल्याण के लक्ष्य को नया रूप दिया। इससे पहले, राष्ट्रवादी आन्दोलन का नेतृत्व लोगों को सुधार की विषयवस्तु मानता था इस दृष्टिकोण का निचोड़ उन दो विभिन्न नीतिगत कार्यक्रमों में देखा जा सकता है, जो या तो भारतीयों के पूर्ण पश्चिमीकरण अथवा औपनिवेशिक प्रशासन से सहयोग की हिमायत करता था।

गाँधी ने इसके विपरीत एक नया विकल्प प्रस्तुत किया, लोगों के अपने संसाधनों का उन्हीं के सहयोग से पुनर्गठन करके भौतिक व आध्यात्मिक प्रगति का रास्ता दिखाया स्वतंत्रता मिलने के पश्चात, अंग्रेजी दमनकारी शासन के विरुद्ध जनान्दोलन संगठित करने के सभी प्रयासों ने अपने सपने साकार करने के लिए, स्वतंत्र देश की सरकार पर अपनी आशाएँ टिका दी, किन्तु सरकार की नीतियों ने वास्तविकता व जन-आकांक्षाओं की खाई को पाटने की अपेक्षा उच्च जातियों व सम्पन्न वर्गों के हाथों में विशेषाधिकार केन्द्रित कर दिए।

संविधान में निहित स्वतंत्रता का आदर्श व उपेक्षितों के पक्ष में अधिकार व स्वीकार्यात्मक सक्रिय हस्तक्षेप की नीति को जातिवादी, सामंतवादी व साम्प्रदायिक भारतीय राजनीति ने औपनिवेशिक नौकरशाही के साथ मिलकर निष्प्रभावी बना दिया आंतरिक अव्यवस्था व अस्थिरता ने नागरिक अधिकारों के प्रति सरकार की प्रतिबद्धता को चुनौती देकर उसे दुर्बल कर दिया।

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 9, Issue 4, July-August 2022 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2022.0904016

1960 के दशक में उभरा नक्सली आन्दोलन, केन्द्रीय सरकार की दमनकारी और शोषक नौतियों की प्रतिक्रिया की अभिव्यक्ति था। इसके परिणामस्वरूप असहमति का हिंसक दमन व कठोर राजनीतिक नियंत्रण के मनमाने तरीकों का नागरिकों पर उपयोग बढ़ा किन्तु इस स्थिति ने संविधान व राज्य द्वारा अपना नियंत्रण स्थापित करने के तरीकों के तीखे विरोधाभास की तरफ सबका ध्यान बँटाया, इसी कारण नए सामाजिक व जन आन्दोलनों का जन्म हुआ।

हिंसक तरीकों से आर्थिक व सामाजिक असमानताओं को बदलने का प्रयास जिस प्रकार नक्सल विद्रोह व उस प्रकार के अन्य आन्दोलनों ने किया, उससे भारतीय राज्य व समाज में एक अभूतपूर्व संकट की स्थिति बनी। नियंत्रण से बाहर होते विरोध का दमन करने के लिए 1975 में इन्दिरा गाँधी की सरकार ने राष्ट्रव्यापी आपातकाल की घोषणा कर दी। श्रीमती गाँधी के इस एकपक्षीय कदम ने भारत में जनाधिकार आन्दोलनों की चिनगारी देकर अचानक भड़काने की भूमिका निभाई।

आपातकाल में मानवाधिकारों का भीषण दमन किया गया व बिना कारण के गिरफ्तारी के कानून का खुलकर व्यापक उपयोग किया गया। एक लाख से भी अधिक लोगों को राजनीतिक कारणों से झूठे आरोपों के आधार पर गिरफ्तार करके जेलों में रखा गया। इस प्रकार गिरफ्तार किए जाने वालों में, विरोधी दलों के नेता, विभिन्न मजदूर संघों के नेता व सामाजिक कार्यकर्ता शामिल थे। सरकार के समाचार पत्रों, व संचार माध्यमों की निकासी पर रोक तथा सार्वजनिक सभाओं पर पूरी तरह रोक लगा दी। भारतीय संविधान द्वारा प्रदत्त सभी नागरिक अधिकारों व उनको सुरक्षा प्रदान करने वाले उपकरणों को 19 महीने के लिए पूरी तरह स्थगित कर दिया गया

इस समय के दौरान ही मानवाधिकार आन्दोलन सांगठनिक आधार के रूप में विकसित हुआ एवं स्पष्ट रूप से दिखने लगा। भारत में जनाधिकार आन्दोलन ने मनमाने ढंग से बन्दी बनाए जाने, संरक्षणात्मक हिंसा, बन्दियों से दुव्र्व्यवहार व कानूनी प्रक्रियाओं के दुरूपयोग के विरुद्ध आवाज उठाई। इस आपातकाल के दौरान अनेक संगठनों का जन्म हुआ। जैसे पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज एण्ड डेमोक्रेटिक राइटस आंध्रप्रदेश, सिविल लिबर्टीज यूनियन व एसोसिएशन फॉर दि प्रोटेक्शन ऑफ डेमोक्रेटिक राइट्स। राज्य की न्यायहीनता का विरोध करने के लिए बनाए गए इन समूहों के अतिरिक्त अन्य समूह राज्य से कई प्रकार की माँग करने के लिए गठित किए गए। यह समूह मानवाधिकार समूहों की श्रेणी में आते हैं। इन समूहों ने निम्नलिखित गतिविधियों को अपनाया:

- तथ्यों की जाँच के लिए जाँच दलों का गठन एवं जाँच-पड़ताल करना।
- जनहित याचिकाएँ दायर करना।
- नागरिक जागरण कार्यक्रमों का आयोजन
- अभियान संचालन।
- स्वतंत्र आन्दोलन व संगठनों के लिए सनर्थन साहित्य निर्माण।

संकट की स्थिति में इन संगठनों ने उन समुदायों, समूहों व व्यक्तियों को राहत देने, समर्थन करने व जनमत प्रभावित करने के प्रशंसनीय प्रयास भी किए हैं, जिनके अधिकारों का हनन किया गया।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि आज हम जिन मानवाधिकारों से परिचित हैं, वह एक लंबे ऐतिहासिक संघर्ष का परिणाम है। इतिहास में दर्ज विश्व प्रसिद्ध घटनाएँ, जिसने दुनिया के सोचने का ढंग बदल दिया अथवा वे छोटी घटनाएँ जिसने किसी खास व्यक्ति, मूल्य अथवा परंपरा पर आघात किया। सभी में उस संघर्ष को आमंत्रित करने की क्षमता थी, जिसे मानव समाज जानता नहीं था. परंतु कार्यान्वित कर सकता था। इसलिए मानवाधिकार मानव जाति द्वारा स्वतंत्र जीवन जीने के लिए निरंतर प्रयासों का परिणाम है। इस दृष्टि से पूरी सभ्यता का विकास जीवन को सुन्दर, व्यवस्थित और न्यायपूर्ण बनाने का प्रयास है. जिसका क्रिया पक्ष मानवाधिकार आन्दोलन है। इन आधारभूत स्वतंत्रताओं को प्राप्त करने का प्रत्येक समाज का आन्दोलन प्रायः विशिष्ट तथा एक-दूसरे से निम्न हैं. परंतु फिर भी प्रत्येक समाज के मानवाधिकार आन्दोलन ने सार्वकालिक अधिकारों के सिद्धान्त से प्रेरणा ली। भारत के मानवाधिकार आन्दोलन पर पश्चिम का सर्वाधिक प्रभाव था। भारत के स्वदेशी आन्दोलन ने मानवाधिकारों के संघर्ष को वृहद् आकार प्रदान किया। सभ्यता और विज्ञान के विकास ने जहाँ एक ओर मनुष्य के जीवन में सकारात्मक परिवर्तन किया है, वहीं उसके लिए कुछ चुनौतियाँ भी खड़ी की हैं। उदाहरणार्थ विश्व व्यापार संगठन तथा ईराक में अमेरिकी हस्तक्षेप को वैश्विक विरोध का सामना करना पड़ा। यहाँ तक कि गुजरात दंगों का भी वैश्विक संदर्भ में अभिप्राय है। आज मानवाधिकार, संगठन नागरिक स्वतंत्रताएँ, विस्थापन, महिला अधिकार तथा पर्यावरण जैसे बहुत से विषयों पर कार्य कर रहे हैं।

संदर्भ सूची

1. मेहरोत्रा, ममता, महिला मानवाधिकार, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृ. 16-17.
2. दीक्षित सोना एवं दीक्षित अरुण कुमार, महिलाओं के मानवाधिकारों का संरक्षण,कुरूक्षेत्र, कुरुक्षेत्र प्रकाशन, 2005, पृ. 11.
3. चतुर्वेदी सतीश, मानवाधिकार और संयुक्त राष्ट्र संघ, जयपुर, पोईन्टर पब्लिशर्स, 2002, पृ. 90-92.

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 9, Issue 4, July-August 2022 ||

DOI:10.15680/IJARETY.2022.0904016

4. संयुक्त राष्ट्र संघ के सम्बंध में बुनियादी तथ्य संयुक्त राष्ट्र सूचना केन्द्र अनुदित एवं प्रकाशित, 2001, पृ. 243.
5. सिंह एम.के. व कुमार आशुतोष, संयुक्त राष्ट्र संघ, कल्पना पब्लिशर्स, चतुर्थ संस्करण, दिल्ली, 2019, पृ. 140-41.
6. कौशिक विजय, वूमैन्स मूवमेन्ट एण्ड ह्यूमन राइटस, पोइन्टर प., जयपुर, 1997.
7. कपूर, एस. के., मानवाधिकार एवं अंतर्राष्ट्रीय विधि, सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी इलाहाबार, पृ. 837
8. श्रीवास्तव वी. पी., ह्यूमन राइट्स इश्यूसेज एण्ड इम्प्लीमेंटेशन, भाग 1, दिल्ली, इण्डियन पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूर्टस, 2004, पृ. 131
9. शर्मा, प्रज्ञा, भारतीय समाज में नारी, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2006.
10. कांत मीरा, महिला दशक और हिन्दी पत्रकारिता, नई दिल्ली, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, 1994, पृ. 26.
11. शर्मा, प्रेम नारायण, महिला सशक्तीकरण एवं समग्र विकास, भारत बुक एवं संजीव कुमार झा सेंटर, लखनऊ, 2006.
12. शर्मा, प्रज्ञा, महिला विकास और सशक्तीकरण, अविष्कार पब्लिशर्स, जयपुर, 2001.
13. देसाई, नीरा एवं ठक्कर ऊषा, वूमैन्स इन इंडियन सोसाइटी, नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, 2003.
14. देवी, उमा, वूमैन्स इक्वलिटी इन इंडिया ए मिथ और रिएलिटी, डिसकवरी पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 2000
15. बक्सी एस. आर., वेलफेयर एण्ड डवलपमेंट ऑफ वूमैन, दीप एण्ड दीप पब्लिशर्स, दिल्ली, 2000.
16. परीक्षा मंथन, वाषिकांकः "भारत में महिला सशक्तिकरण समग्र विवेचना,भाग 5, 2020- 21, पृ. 367
17. मेहता, चेतन सिंह, महिला एवं कानून, आशीष पब्लिशर्स हाउस, दिल्ली, 2004.
18. महावर सुनील, राज्य एवं महिला मानवाधिकार, जयपुर, पोइन्टर पब्लि. पृ. 75.
19. योजना, दिसम्बर, 2020, पृ. 34
20. शर्मा विष्णुदत्त, नारी और न्याय, शोध प्रकाशन अकादमी, गाजियाबाद, 1999.
21. छिल्लर, मंजुलता : भारतीय नारी शोषण के बदलते आयाम, तृतीय संस्करण, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 2017.
22. मौर्या, गीता, मानवाधिकार, अनुभव पब्लिशिंग हाऊस, चतुर्थ संस्करण, इलाहाबाद, 2018, पृ. 20-23.
23. देवी शकुन्तला, वूमैन्स स्टेट्स एण्ड सोशल चेज, पोइन्टर पब्लि. जयपुर, 1999.
24. कटारिया सुरेन्द्र, मानवाधिकार, सभ्य समाज एवं पुलिस, आर.बी.एस. पब्लिशर्स, जयपुर, 2003.
25. धर्मराजन, शिवानी, एनजीओ डेवलपमेन्ट इनीसिएटिव एण्ड पब्लिक आर्डर, कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 1998, पृ० 99.
26. चतुर्वेदी अरूण एवं लोढ़ा संजय, भारत में मानवाधिकार, जयपुर, पंचशील प्रकाशन, 2005, पृ. 57.
27. कुरुक्षेत्र नवंबर, 2020, पृ. 16.
28. बाउओ, सीमोन द, द सेकण्ड सेक्स (प्रज्ञा खेतान द्वारा अनुदित) हिन्दी पॉकेट बुक्स, नई दिल्ली, 2004, पृ. 66.
29. जोशी मधु द्वारा अनुवादित ग्रीथर जर्मन कृत : विद्रोह स्त्री, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 2001, पृ. 68.